भाषा विज्ञान के आदि आचार्य महर्षि पाणिनि

सत्यपाल शास्त्री (डीवान)

आज इस तथ्य को विश्व के लगभग सभी भाषाशास्त्री एक मत से स्वीकार करने लग पड़े हैं कि महर्षि पाणिनि विश्व के पहले भाषा शास्त्री थे। जिस प्रकार ग्रीक में थ्रैक्स, डिस्कोलस, इरोडियन आदि वैयाकरणों ने योरोप में भाषा-विज्ञान के अध्ययन का सूत्रपात किया उसी प्रकार भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन के प्रवर्तक महर्षि पाणिनि हुए हैं। योरोप के इन वैयाकरणों की रचनाओं पर धर्म, दर्शन, तर्क शास्त्र की छाप है जब कि पाणिनि के व्याकरण में केवल विशुद्ध व्याकरण सम्बन्धी नियमों में भाषा विज्ञान के मूल सिद्धांत अनुस्यूत हैं।

स्वर्गीय डा० वासुदेव शरण अग्रवाल जी की 'पाणिनि कालीन भारत' में पाणिनि के वैयाकरण सूत्रों में धर्म, दर्शन, इतिहास, भूगोल, मानव विज्ञान इत्यादि सब पहलुओं पर प्रकाश डाला है।

समय प्रवाह से जब वैदिक भाषा जनसाधारण को ज्यों-ज्यों दुरूह एवं कठिन प्रतीत होने लगी त्यों-त्यों ही यह बात भी अनिवार्य प्रतीत होने लगी कि उसे सुगम रूप देने के ढंग एवं उपाय ढूंडे जाएं। उसी खोज के परिणाम स्वरूप पद पाठ पद्धति का प्रवर्तन प्रारम्भ हुआ। पद पाठ

पद्धति में सन्धि-विच्छेद, पद-विश्लेषण आदि आवश्यक हैं। भाषा विज्ञान में भी ये अनिवार्य तत्व हैं। अतः यदि यह कहा जाए कि भारतीय पद पाठ पद्धति भाषा विज्ञान का विशुद्ध रूप से प्रारम्भिक रूप है तो अत्युक्ति नहीं होगी। बाद में जब वैदिक आर्यों के साथ कई अन्य जातियां भी आकर घुलमिल गईं तो उनकी भाषाओं का भी वैदिक भाषा के साथ आदान-प्रदान हुआ। फलतः लौकिक भाषा का नया रूप सामने आने लगा। कई विद्वानों का मत है कि यही भाषा प्राकृत भाषा का प्रारम्भिक रूप था, जब कि कुछ विद्वान् इसे वैदिक और लौकिक संस्कृत का मध्यवर्ती रूप मानते हैं। इसी लोक भाषा को पाणिनि ने संवार कर संस्कृत रूप दिया था। संस्कृत भाषा का शब्दार्थ ही इस बात का ज्वलन्त प्रमाण है कि यह संवारी हुई तथा परिष्कृत भाषा है। परन्तु यहां फिर एक आशंका उत्पन्न होती है कि पाणिनि से पहले भी लौकिक संस्कृत में वाल्मीकि रामायण और महाभारत जैसी महत्व पूर्ण रचनाएं हो चुकी थीं। चाहे इन की भाषा में पाणिनि व्याकरण की दृष्टि से कई त्रुटियां पाई जाती हैं तो भी इनके संस्कृत रूप को स्वीकार करने के विषय में किसी को भी कोई आपत्ति नहीं हो सकती। ऐसी स्थिति में यह बात सामने आती हैं कि पाणिनि से पहले जो आपिशालि, गार्ग्य, सेनक, स्फोटायन, गालव, भारद्वाज, औदुम्बरायण, काशकृत्स्न, शाकटायन, काश्यप, चाक्रवर्मण, शकल्य आदि ८५ वैयाकरण हो चुके थे[1] (पाणिनि ने केवल १० प्रसिद्ध वैयाकरणों का अष्टाध्यायी में उल्लेख किया है) उनका भी वैदिक या वैदिक कालोत्तर लोक भाषा को संस्कृत रूप देने में महत्व-पूर्ण योगदान रहा होगा, ऐसा विद्वानों का विचार है। खेद है कि इन सभी की कृतियां अब उपलब्ध नहीं हैं। हां कहीं-कहीं ऐन्द्र व्याकरण का उल्लेख अवश्य आता हैं, जिस के लेखक ब्रह्मदेव और देवेन्द्र थे। चीनी यात्री ह्वेनसांग तथा तिब्बती इतिहासकार तारानाथ के अनुसार कातन्त्र व्याकरण की रचना ऐन्द्र व्याकरण के आधार पर हुई थी। तैत्तिरीय संहिता में उल्लेख आता है कि संस्कृत व्याकरणों में ऐन्द्र व्याकरण का सर्वप्रमुख स्थान है। डॉ० बर्नेल भी इसी मत के समर्थक हैं। आधुनिक इतिहासकारों का मत है कि ऐन्द्र व्याकरण और पाणिनि के मध्य कम से कम दो सम्प्रदायों का व्यवधान अवश्य रहा होगा।

1. "संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास" पृ० ६३; ले० युधिष्ठिर मीमांसक।

पाणिनि ने अपनी समकालीन लौकिक भाषा को संस्कृत रूप देने के लिए जो व्याकरण सम्बन्धी नियम बनाए वे अन्तिम, सर्वमान्य तथा सर्वथा वैज्ञानिक हैं। इन्होंने सूत्र शैली में अष्टाध्यायी की रचना करके गागर में सागर भर दिया। इस की टक्कर का ग्रन्थ संसार की किसी अन्य भाषा में शायद ही मिल सके। यही कारण है कि संस्कृत का अरबी, चीनी, लैटिन, जर्मन तथा ग्रीक जैसी विश्व की प्रमुख तथा प्राचीन भाषाओं में महत्वपूर्ण स्थान है। ब्राह्मण संस्कृति से परिपूर्ण यही संस्कृत बाद में भारत में साहित्यिक अभिव्यक्ति की तथा प्रशासन की भाषा बनी। ऐसे कई प्रमाण मिलते हैं। डा० ए० बी० कीथ का कहना है[2]—"Panini has rules which are meaning less for any thing but a vernacular, apart from the fact that the term Bhasa which he applies to the speech has the natural sense of a spoken language."

जब संस्कृत किसी की मातृ भाषा नहीं रही तो भी यह आज तक इसी व्याकरण के कारण ही भाषा शास्त्रियों के लिए प्रेरणा स्रोत, विद्वानों, इतिहासकारों, तथा धर्म की भाषा बनी हुई है। भाषा शास्त्रियों का कहना है कि यदि उन्हें संस्कृत के इस विवरणात्मक व्याकरण (पाणिनि व्याकरण) के समान ही ग्रीक, लैटिन आदि प्राचीन योरोपीय भाषाओं के व्याकरण भी उपलब्ध होते तो उन्हें यारोपीय भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन करने में इस कठिनाई का सामना न करना पड़ता जिसका वे आज कर रहे हैं।

अमेरिका के भाषा शास्त्री भाषा विज्ञान का सूक्ष्म तथा गम्भीर मनन करके इस परिणाम पर पहुंचे हैं कि पाणिनि की तुलना में ग्रीक वैयाकारणों का काम तो सर्वथा नगण्य तथा बेबुनियाद है। उनके व्याकरण के क्षेत्र में अध्ययन तथा परिणाम न तो वैज्ञानिक हैं और न ही भाषा शास्त्रीय तत्वों पर आधारित। उनका उद्देश्य केवल शुद्ध रूपों का ज्ञान कराना था। अमेरिका के भाषा शास्त्रियों का यह भी कहना है कि पाणिनि ने जिस

1. हिस्ट्री ऑफ संस्कृत लिटरेचर पृ० ६

(3) Language P.12 Prof. L. Bloomfield. P.12

संस्कृत भाषा के व्याकरण की रचना की थी वह उस युग की अवश्य एक जीवन्त तथा लोक प्रचलित भाषा थी, इसी लिए इस में अनेक लौकिक तथा देशज शब्दों का समावेश है, (गुदुलु, आलिगु, कहूषय, नवाकु, वटाकु, शिग्रु, कहोढ, बह्वस्क आदि) जिन्हें पणिनि ने व्याकरण की दृष्टि से संवारा है। कुछ सूत्र तो केवल इस प्रकार के शब्दों से ही सम्बन्धित हैं। उन्होंने समस्त संस्कृत वाङ्मय को दृष्ट, प्रोक्त, उपज्ञात, कृत और व्याख्यात इन पांच भागों में विभक्त करके नियमबद्ध किया। सन् १७७७ में मिश्र देश में सिकन्दरिया नगर के निवासी फ्रेडरिक औगुस्ट वुल्फ नामक विद्वान ने सर्व प्रथम भाषा विज्ञान के क्षेत्र में काम आरम्भ किया। इसी से आगे चलकर ऐतिहासिक भाषा विज्ञान का प्रचलन हुआ। वुल्फ महोदय ने प्राचीन तथालुप्त प्राय शिलालेखों को आधार बनाकर कार्य आरम्भ किया। अब पाठक अनुमान लगा सकते हैं कि पाणाणि के सैकड़ों वर्षों बाद योरोप ने इस विषय में काम आरम्भ किया जो वह ई० पू० ४०० वर्ष पहले कर चुके थे।

पाणिनि के भाषा तथा व्याकरण सम्बन्धी इस प्रकार के सूक्ष्म अनुशीलन तथा मौलिक परिणामों के आधार पर इस बात का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि निश्चय ही उन से पूर्व व्याकरण शास्त्र की एक सर्व श्रेष्ठ परम्परा स्थापित हो चुकी थी जिसके परिणाम स्वरूप व्याकरण की एक अलग शाखा ही स्थापित हो चुकी थी जिस में भाषा विज्ञान के नियम भी अनुप्राणित हैं। यही कारण है कि आधुनिक भाषा शास्त्री इस तथ्य को सर्व मत से स्वीकार कर रहे हैं कि भाषाओं के वैज्ञानिक अध्ययन तथा अनुशीलन के लिए जिस प्रक्रिया या पद्धति की आवश्यकता होती है उसका प्रवर्तन पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी में आज से कई सौ वर्ष पहले कर दिया था। महर्षि पाणानि की इन्हीं विशेषताओं तथा महत्वपूर्ण उपलब्धिओं के परिणाम स्वरूप समस्त संसार के भाषा वैज्ञानिक इनका नाम बड़े सम्मान तथा श्रद्धा से लेते हैं।

पाणिनि का समय और जन्मस्थान :—

पाणिनि के स्थिति काल के विषय में पर्याप्त मत भेद है। भारतीय

(क) नित्यं पणः परिमाणे ।३।३।६६।
(ख) तेन रक्तं रागात् । लाक्षारोचनाट्ठक् ॥४।२।१,२॥
(ग) विभाषा भाषायाम् ॥६।१।१८१॥ (घ) उदक च विपाशः ४।२।७४

तथा पश्चिमी विद्वानों ने इस विषय पर विभिन्न मत व्यक्त किए हैं। भण्डारकर और डॉ० बेलवेकर का मत है कि पाणिनि सातवीं शताब्दी ई० पू० हुए थे। मैक्समूलर ने इन्हें ३५० ई० पू० से पहले माना है। श्रीरामकृष्ण भण्डारकर (आर० के० भण्डारकर) तथा डॉ० उदय नारायण तिवारी भी इसी मत का समर्थन करते हैं। श्री पाठक महोदय के अनुसार पाणिनि ७०० ई० पू० के अन्तिम भाग में हुए थे तथा जैन तीर्थङ्कर वर्द्धमान महावीर इनके बाद हुए थे।

श्री देवदत्त रामकृष्ण भण्डार के इस विषय में दो मत हैं। उनके प्रथम मत के अनुसार पाणिनि सातवीं ई० पू० में हुए थे।

इनके दूसरे मत के अनुसार पाणिनि का समय छठी शताब्दी ई० पू० का मध्य भाग था। जबकि डा० कीथ इनका समय ३५० ई० पू० के लगभग मानते हैं।

'संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास' नामक विशाल ग्रन्थ के लेखक श्री पाणिनि का समय बहुत पीछे ले जाते हैं। उनके अनुसार पाणिनि [illegible] ई० पू० हुए थे।

डॉ० ग्रियर्सन महोदय का कथन है कि पाणिनि का स्थिति काल ५०० ई० पू० था। मैकडानल महोदय भी लगभग इसीमत के साथ सहमत हैं। एक और पश्चिमी विद्वान वेबर ने इनका समय सिकन्दर के भारत में आने के समय से बाद माना है। इस मत का बुरी तरह खण्डन हो चुका है। कीथ महोदय के अनुसार इस विषय में कोई भी पुष्ट, युक्ति युवत तथा निर्णायक प्रमाण न मिलने के कारण कोई भी निश्चित राय निर्धारित करना अति कठिन है। प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता तथा पार्णिन के विषय में विस्तृत अनुसन्धान करने वाले विद्वान डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल का मत है कि पाणिनि ई० पू० ५वीं और चतुर्थ का मध्य भाग है।

भण्डारकर इंस्टीच्यूट पत्रिका ११।८३
कारमाईकल व्याख्यान पृ० २४१
'प्राचीन भारत मुद्रा शास्त्र' १९२१ पृ० ४६
History of Sanskrit literature P. 426
संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास पृ० १९८
'पाणिनि कालीन भारत वर्ष' पृ० ४७०

अतः यही निष्कर्ष निकलता है कि यह ७०० से ५०० ई० पू० के मध्य हुए होंगे।

पाणिनि का जन्म शालातुर (आधुनिक अटक नगर के समीप) नामक नगर में हुआ था। इनकी सम्पूर्ण शिक्षा तक्षशिला विश्वविद्यालय में हुई थी। इनकी माता का नाम राक्षी और पिता का नाम पणिन् था।
प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्यूनसांग ने पाणिनि के उक्त जन्म स्थान में इनकी एक प्रस्तर-प्रतिमा भी देखी थी, जो सम्भवतः वहां के ही लोगों के द्वारा इनकी स्मृति में स्थापित की गई थी।

कथा सरित सागर के चतुर्थ तरंग की एक कथा के अनुमार पाणानि उपवर्ष के शिष्य थे। कात्यायन, व्याड़ि शौनक, इन्द्रदत्त और पिङ्गल इनके समकालीन थे पञ्चतन्त्र के इस श्लोक के अनुसार इनकी मृत्यु व्याघ्र द्वारा हुई थी—

"सिंहो व्याकरण कर्तु रहरत् प्राणान् प्रियान् पाणिनेः"

यह भी कहा जाता है कि यह प्रारम्भ में अपने छात्र जीवन में इतने बुद्धिमान नहीं थे। परिणामतः इन्होंने निराश होकर भगवान शंकर की आराधना करनी आरम्भ करदी। भगवान ने इनकी कठिन तपस्या से प्रसन्न होकर इनके समीप आकर अपना डमरू बजाया जिसकी ध्वनि समूह से चौदह सूत्र निकले जिन्हें माहेश्वर सूत्र कहते हैं। कई विद्वानों का यह भी मत है कि सम्भवतः पाणानि के महेश्वर नामक अथवा महेश्वर स्वरूप गुरू थे जिन्होंने पाणिनि का मार्ग निर्देश करने के लिए इन चौदह सूत्रों की रचना की होगी। बाद में इन्हीं को आधार मानकर पाणानि ने अपने महत्वपूर्ण ग्रन्थ अष्टाध्यायी की रचना की थी।

इनकी महत्व पूर्ण रचना अष्टाध्यायी है। इसके आठ अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय चार पादों में विभाजित है। अष्टाध्यायी में कुल ४००० सूत्र हैं। इन में से ५ को छोड़कर शेष समस्त अपने मूल रूप में आज तक सुरक्षित हैं।

अष्टाध्यायी के प्रथम अध्याय में व्याकरण शास्त्र सम्बन्धी संज्ञाएं

1. डॉ. बाबू राम सक्सेना कृत 'संस्कृत व्याकरण प्रवेशिका पृ० २६
2. पञ्चतन्त्र, मित्रसंप्राप्ति श्लोक ३६, जीवानन्द संस्करण।

तथा परिभाषाएं हैं। दूसरे तथा तीसरे अध्याय में समासों तथा कारकों का विस्तृत विवेचन किया गया है। चौथे तथा पांचवें अध्याय में तद्धित प्रकरण है। छठे तथा सातवें अध्यायों में तिङ् तथा सुप् प्रत्ययों से सम्बन्ध रखने वाली प्रक्रिया का विस्तृत विवेचन है और आठवें अध्याय में सन्धियां तथा उनके विधि-निषेधों की विस्तृत व्याख्या की हुई है।

पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी की रचना सूत्र शैली के माध्यम से सम्भवतः इसलिए की होगी कि उस समय में लेखन-सामग्री का अभाव था तथा वैदिक काल से विषय को कण्ठस्थ करने की प्रथा चली आ रही थी। सूत्र शैली द्वारा अष्टाध्यायी की रचना करने के लिए पाणिनि को मुख्यतः इन छः साधनों का आश्रय लेना पड़ा—(१) प्रत्याहार, (२) अनुबन्ध, (३) अनुवृत्ति, (४) गण, (५) संज्ञाएं, (६) स्थान-स्थान पर सूत्रों के लागू होने वाले स्थानों के लिए पूर्वत्राऽसिद्धम् (८।२।१) जैसी परिभाषाओं की स्थापना।

पाणिनि ने अष्टाध्यायी में निहित नियमों द्वारा अपनी समकालीन भाषा के सम्पूर्ण शब्द भण्डार की व्युत्पत्ति तथा सिद्धि करदी है शब्द तथा उसके अर्थ पर बड़ी सूक्ष्मता से विवेचन किया है। अष्टाध्यायी की सब से बड़ी विशेषता यह है कि इस में कोई भी शब्द निरर्थक नहीं आया है। प्रत्येक शब्द को व्याकरण की कसौटी पर परखा तथा सिद्ध किया गया है। इसलिए महाभाष्यकार पतञ्जलि इस विषय में कहते हैं:— "सामर्थ्ययोगान्नहि किञ्चिदस्मिन् पश्यामि शास्त्रे यदनर्थकं स्यात्" अर्थात् मैं अपनी सामर्थ्य के आधार पर कह सकता हूं कि अष्टाध्यायी में कुछ भी अनर्थक समाविष्ट नहीं हुआ है।

चीनी यात्री ह्यूनसांग का कहना है कि—"महर्षि पाणिनि ने पूर्ण रूप से शब्द भण्डार से शब्द चुनने आरम्भ किए और १००० दोहों में सारी व्युत्पत्ति रची। प्रत्येक दोहा ३२ अक्षरों का था। इस में प्राचीन तथा नवीन सम्पूर्ण लिखित ज्ञान समाप्त हो गया। शब्द और विषय की कोई भी बात छूटने नहीं पाई।"

1. महाभाष्य ६।१।७७
2. 'ह्यू न सांग' लेखक वाटर्स भाग १, पृ० २२१

अतः स्पष्ट है कि अष्टाध्यायी पाणिनि की सर्वोत्तम तथा अपूर्व रचना है। इसके आठ अध्याय होने के कारण ही इसका नाम अष्टाध्यायी है। वस्तुतः सारी पुस्तक 'अ, इ, उ, ण्' आदि इन १४ माहेश्वर सूत्रों पर आधारित है। आज भाषा शास्त्री इसे भाषा विज्ञान के प्रामाणिक विवेचन का मान दण्ड मानते हैं। अपनी इन विशेषताओं के कारण ही यह ग्रन्थ भाषा शास्त्रियों के लिए एक महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य प्रेरणा स्रोत बना हुआ है। पाणिनि ने इसकी रचना करके जो कीर्तिमान स्थापित किया वह एक प्रकाश स्तम्भ बनकर युगों-युगों के लिए विद्वानों तथा भाषा शास्त्रियों का पथ प्रदर्शक बन गया। इस ग्रन्थ की इन्हीं विशेषताओं के कारण प्रो० मैक्स मूलर ने लिखा है—"There is no Grammar in any language that could vie with the wonderful mechanism of his eight books of grammatical rules".

अष्टाध्यायी के माध्यम से पाणिनि की भाषा विज्ञान के क्षेत्र में जो मौलिक तथा महत्वपूर्ण देन है उसका संक्षिप्त सर्वेक्षण इस प्रकार है:—

(१) १४ माहेश्वर सूत्र सारी अष्टाध्यायी के मूलभूत आधार हैं।

(२) पद संस्कारः—शब्दों का प्रकृति और प्रत्यय के रूप में विश्लेषण।

(३) शब्द का यह तीन प्रकार का विभाजनः—सुबन्त, तिङन्त और अव्यय। इन तीन श्रेणियों में शब्द का विभाजन संसार भर के इस प्रकार के विभाजनों में सर्वोत्तम माना जाता है। इसी के आधार पर पाणिनि ने निरुक्तकार यास्क के नाम, अख्यात, उपसर्ग और निपात इन चार भेदों का खण्डन किया है। पश्चिमी भाषा शास्त्रियों ने शब्द के आठ भेद तो किए हैं परन्तु यह विभाजन भी पाणिनि कृत शब्द-विभाजन के समान वैज्ञानिक नहीं है।

(४) वाक्य का महत्वः—सर्व प्रथम पाणिनि ने ही अष्टाध्यायी के माध्यम से इस तथ्य को भाषा शास्त्रियों के सामने प्रस्तुत किया कि भाषा का चरम बिन्दु वाक्य है न कि शब्द।

(५) पाणिनि ने ही सर्व प्रथम नाम धातु का सिद्धान्त अष्टाध्यायी के द्वारा विद्वानों के सामने प्रस्तुत किया।

(६) वैदिक संस्कृत से लौकिक संस्कृत का भेद भी पाणिनि ने ही इस ग्रन्थ द्वारा किया है।

(७) प्रत्येक संस्कृत शब्द का व्युत्पत्ति पूर्वक विश्लेषण भी भाषा के क्षेत्र में सर्व प्रथम पाणिनि की ही देन है।

(८) अष्टाध्यायी की सूत्र पद्धति बड़ी ही वैज्ञानिक है। पाणिनि ने इसके द्वारा इस शुष्क विषय को सरल तथा सुबोध बना दिया है। सूत्र विन्यास ऐसा अद्भुत शैली में किया हुआ है कि व्याकरण का इतना विस्तृत विषय इस में सीमित हो गया हुआ है।

(९) प्रत्याहार बनाने के ढंग का आविष्कार तथा सुबन्त, तिङन्त, सन्धि, कृदन्त, गुण, वृद्धि, दीर्घ, सम्प्रसारण, आगम, आदेश, अनुबन्ध (इत्, णित्, कित् आदि) लुप, लुक्, श्लु, टि, घु, (संज्ञाए) आदि के द्वारा भाषा का अध्ययन उपस्थित करना पाणिनि की प्रखर मेधा की मौलिक उद्भावना है।

(१०) पाणिनि ने व्याकरण के नियमों एवं सिद्धांतों के द्वारा संस्कृत भाषा का ऐसा स्तर निश्चित कर दिया जो सदा के लिए पक्का हो गया।

(११) उन्होंने एकाक्षर धातुओं की सहायता से समस्त शब्द भण्डार को योजना बद्ध कर दिया है। इनके साथ उपसर्ग तथा प्रत्यय जोड़ कर हजारों शब्द बनाए जा सकते हैं। उपसर्ग एवं प्रत्ययों की सहायता से बहुधा अर्थ भी बदल जाते हैं। इसी लिए कहा गया है—"उपसर्गेण धात्वर्थः बलादन्यत्रनीयते" अर्थात् उपसर्ग के संयोग से धातु का अर्थ बलपूर्वक बदल दिया जाता है। पाणिनि के द्वारा वाक्य को ही भाषा की इकाई स्वीकार करने में सम्भवतः यही कारण है। परवर्ती भाषा शास्त्रियों ने इस मत का सर्व सम्मति से स्वागत किया है।

(१२) अष्टाध्यायी में पाणिनि ने ध्वनि विज्ञान की दृष्टि से उच्चारण स्थान तथा ध्वनियों का जो वर्गी करण किया है वह भी भाषा विज्ञान के क्षेत्र में अपने ढंग का सर्वप्रथम तथा अनूठा प्रयत्न माना जाता है। इसी प्रकार स्वरों पर सूक्ष्म विचार भी बड़ा विचित्र है। पश्चिमी विद्वानों ने भी इसे यथावत् स्वीकार कर लिया हुआ है।

(१३) अष्टाध्यायी के माध्यम से पाणिनि ने हमारे सम्मुख वैदिक तथा लौकिक संस्कृत का तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत किया है। योरोपीय विद्वानों ने भाषा विज्ञान के क्षेत्र में जिस कार्य का आरम्भ उन्नीसवीं शताब्दी में किया था पाणिनि ने वही काम ई० पू० ५०० से भी पहले आरम्भ कर दिया था। यही कारण है कि अष्टाध्यायी में निहित भाषा विज्ञान सम्बन्धी सामग्री पर जब आज का भाषाशास्त्री मनन करता है तो उसे भरसक विस्मित हो जाना पड़ता है तथा उसे यह स्वीकार करने के लिए बाध्य हो जाना पड़ता है कि इस विषय में भाषा विज्ञान जगत् पाणिनि का अवश्य आभारी है और चिर ऋणी है। इन प्रमाणों से स्पष्ट है कि यदि वर्तमान युग का भाषा विज्ञान का विद्यार्थी सर्व-प्रथम अष्टाध्यायी का अध्ययन कर ले तो उस का अग्रिम मार्ग अवश्य सुगम हो जाता है।

(१४) अष्टाध्यायी की सब से बड़ी विशेषता यह है कि इस में समाविष्ट एक भी शब्द निरर्थक नहीं है। इस सन्दर्भ में महाभाष्यकार पतञ्जलि की यह उक्ति सर्वथा सत्य है—"प्रमाण भूत आचार्यो दर्भ पवित्रपाणिः शुचावनूकाशे प्राङ्मुख उपविश्य महता प्रयत्नेन सूत्राणि प्रणयति स्म। तत्राशक्यं वर्णेनाप्यनर्थकेन भवितुम्, किं पुनरियता सूत्रेण।"[15]

कुशा से पवित्र हाथों वाले लब्धप्रतिष्ठ तथा व्याकरण के प्रख्यात आचार्य पाणिनि ने पूर्वाभिमुख बैठ कर बड़े एकाग्रचित्त से तथा प्रयत्न पूर्वक अष्टाध्यायी के सूत्रों का प्रणयन किया, अतः इन में एक भी वर्ण निरर्थक नहीं हो सकता है, सम्पूर्ण सूत्र की तो बात ही दूर है।

हां यह मानना पड़ेगा कि महर्षि पाणिनि की संक्षिप्तीकरण पद्धति (सूत्र पद्धति) का परवर्ती वैयाकरणों ने अनुकरण करके भाषा को अति कठिन कर दिया है। इस विषय में तो उन्होंने यहां तक दिया है—"अर्द्धमात्रालाघवेन पुत्रोत्सवं मन्यन्ते वैयाकरणाः।"

अष्टाध्यायी की उपर्युक्त विशेषताओं के कारण ही देशी तथा विदेशी विद्वानों ने इस की भूरी-भूरी प्रशंसा की है। संस्कृत-इंगलिश शब्द कोश के सम्पादक योरोपीय विद्वान् सर मोनियर विलियम ने अष्टाध्यायी को

[15] महाभा० ४।२।६६

भाषा शास्त्र और व्याकरण के क्षेत्र में मनुष्य का ऐसा सर्वोत्तम आविष्कार माना है जिस की पुनरावृत्ति असम्भव है। इसी प्रकार कोलब्रुक, सर डब्लयू. डब्लयू. हण्टर, लेकिन ग्राड के विद्वान् प्रो. टी. शेरवात्सकी आदि विद्वानों ने पाणिनि की अष्टाध्यायी की प्रशंसा की है।

अष्टाध्यायी के अतिरिक्त पाणिनि ने धातुपाठ, गणपाठ, उणादि सूत्र, लिंगानुशासन, शिक्षा, जाम्बवती विजय (महाकाव्य) द्विरूप कोश (इसकी हस्तलिखित प्रति इण्डिया आफिस लायब्रेरी, लन्दन में है) आदि पुस्तकों की रचना की थी जिन में से जाम्बवती विजय उपलब्ध नहीं है।

उपर्युक्त इस संक्षिप्त सर्वेक्षण के आधार पर यह बात सर्वथा स्पष्ट हो जाती है कि पाणिनि ने संस्कृत भाषा पर अपनी गहरी तथा स्थायी छाप छोड़ी है। यही कारण है कि परवर्ती वैयाकरण पाणिनि की नकल करने में भी सफलता प्राप्त नहीं कर सके हैं। प्रतीत होता है कि जिस प्रकार वर्तमान युग की भाषाओं में स्थानीय विशेषताओं तथा प्रभावों, प्रान्तीय तथा सामाजिक आदि स्तरों के आधार पर अल्प या अधिक भेद अवश्य है ठीक इसी प्रकार पाणिनि कालीन भाषाओं और लौकिक तथा वैदिक संस्कृत का रहा होगा। पाणिनि काल में गुरुकुलों तथा ऋषि आश्रमों में जिस शिष्ट उदीच्य भाषा का प्रचलन था वही वर्तमान पश्चिमी पञ्जाबी (लहन्दा) का प्रारम्भिक रूप था।

वही भाषा पाणिनि के अध्ययन और व्याकरण का आधार बनी थी। इस विषय में गोल्ड स्टकर, डॉ. कीथ, लीबिश आदि योरोपीय तथा डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, सुनीति कुमार चाटुर्ज्या डॉ. बाबू राम सक्सेना आदि भारतीय विद्वान् लगभग सहमत हैं। इन सभी का यह मत है कि यदि पाणिनि कालीन संस्कृत को बोल चाल की भाषा स्वीकार न किया जाये तो उनके कितने ही सूत्र बेकार हो जाते हैं क्योंकि उन्होंने उनका निर्माण केवल जनसाधारण की भाषा को ध्यान में रख कर ही किया था।[16] कुछ खोजों के आधार पर यह स्वीकार किया जाता है कि पाणिनि पारसीकों तथा उनके सेवकों ग्रीकों तथा यवनों से अवश्य परिचित

[16] बोल-चाल की भाषा से सम्बन्धित सूत्र—३।२।२४, ३।२।२५, ५।२।२, ५।२।३१, ५।३।५८, ३।२।१०८ आदि।

थे*। प्रसिद्ध अमरीकी भाषा शास्त्री श्री ब्लूम फील्ड महोदय अपनी पुस्तक में कई स्थलों पर पाणिनि की प्रशंसा करते हैं। एक स्थान पर वह लिखते है—"वास्तव में वह भारत देश था जहां ऐसे ज्ञान का उदय हुआ जो योरोप के लोगों में भाषा सम्बन्धी विचार धारा में क्रान्तिकारी परिवर्तन उपस्थित करने में समर्थ सिद्ध हुआ। जिस प्रकार आज हमारे देश के विभिन्न वर्गों की भाषाओं में अन्तर है उसी प्रकार प्राचीन काल में हिन्दुओं में भी विभिन्न सामाजिक स्तर के लोगों की भाषाओं में अन्तर था। उस समय कुछ ऐसी परिस्थिति आ गई थी कि उच्चवर्ग के लोग निम्न वर्ग के लोगों की भाषा को अपनाने के लिए बाध्य हो रहे थे। ऐसी स्थिति में हिन्दु वैयाकरणों का ध्यान वैदिक भाषा की ओर से निम्न वर्ग के लोगों की भाषा की ओर गया और वे उस भाषा के नियम-उपनियम बनाने में प्रवृत्त हुए जिसे आज संस्कृत कहते हैं। समय की गति से इस भाषा के विस्तृत व्याकरण, कोश तथा दूसरे प्रकार के साहित्य का निर्माण हुआ।"*

डा॰ कीथ का कहना है—"In comparison with the work of Greek grammarians Panini is on a totally different plane in this regard."(18) *

प्रसिद्ध भाषा शास्त्री श्री बेंजामिन ने १९४० ई॰ में एक लेख में लिखा था—"जहां तक हमें ज्ञात है, आज के रूप में ही ईसा से कई शताब्दियां पूर्व पाणिनि ने इस विज्ञान (भाषा विज्ञान) का शिलान्यास किया था। पाणिनि ने उस युग में ही वह ज्ञान प्राप्त कर लिया था जो हमें आज उपलब्ध हुआ है। संस्कृत भाषा के वर्णन अथवा इसे विषय बद्ध करने के लिए पाणिनि के सूत्र बीज गणित के जटिल सूत्रों (फार्मूलों) के समान हैं। ग्रीक लोगों ने वस्तुतः इस ज्ञान की अधोगति कर रखी थी। इन की कृतियों से ज्ञात होता है कि वैज्ञानिक विचारक के रूप में हिन्दुओं के मुकाबले में ये (ग्रीक लोग) कितने अधिक निम्न स्तर के थे। उन की भ्रान्ति पूर्ण विचार धारा का प्रभाव प्रायः दो सहस्र वर्षों तक चलता रहा। वास्तव में १९वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही जब से पश्चिम ने

(18) *History of Sanskrit literature P. 425*

पाणिनि को प्राप्त किया है तभी से आधुनिक वैज्ञानिक भाषा शास्त्र का आरम्भ होता है।"

उपर्युक्त सभी प्रमाण इस बात के साक्षी है कि वास्तव में ही पाणिनि भाषा विज्ञान के आदि आचार्य थे।

Prof. Leonard Bloomfield -
"This grammar, which dates from
somewhere round 350 to 250 B.C., is one of
the greatest monuments of human intelligence.
It describes, with the minutest detail, every
inflection, derivation and composition, and
every syntactic usage of its author's
speech. No other language, to this day, has
been so perfectly described. It may
have been due, in part, to this excellent
codification that Sanskrit became, in
time, the official and literary language
of all of Brahmin India." page 11

"The Indian grammar presented to European
eyes, for the first time, a complete and
accurate description of a language,
based not upon theory but upon
observation. Moreover, the discovery of
Sanskrit disclosed the possibility of a
comparative study of languages." P. 11

"The Hindu grammar taught ~~the~~ european
to analyze (analyze) speech-forms,
which hitherto had been vaguely
recognised, could be set
forth with certainty and precision."
— P. 11

See Front